[1987] 3 उम० नि० प० 213

परम हंस यादव और सदानंद त्रिपाठी

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

25 फरवरी, 1987

न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र और न्यायमूर्ति एम० एम० दत्त

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)—धारा 30—एक ही विचारण में अन्य सह-अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध एक सह-अभियुक्त की संस्वीकृति मुख्य साक्ष्य नहीं होती है। प्रत्येक मामले में प्रत्यक्ष साक्ष्य के आधार पर षड्यंत्र के आरोप का समर्थन नहीं किया जा सकता है किंतु यदि अभियोजन पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लेता है, तो स्पष्ट संबंध सिद्ध करना पड़ेगा और कृत्यों की शृंखला भी पूरी होनी चाहिए, संबंध के एक भाग को पूर्ण मानना जोखिमपूर्ण होगा।

अपीलार्थियों का विचारण कलक्टर की बम फेंक कर हत्या करने के आरोप में किया गया। हत्या एक व्यक्ति ने की थी किंतु दूसरे को, जो उस समय जेल में था, हत्या के षड्यंत्र में शामिल किया गया। विचारण न्यायालय ने दोनों अपीलार्थियों को हत्या के लिए दोषसिद्ध ठहराया। इसके विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की गई। उच्च न्यालय ने भी उनकी दोषसिद्धि की पुष्टि कर दी। उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थियों ने उच्चतम न्यायालय में अपील की। उच्चतम न्यायालब ने एक अभियुक्त की दोषसिद्धि की पुष्टि कर दी तथा उसकी अपील खारिज कर दी किंतु दूसरे अभियुक्त को संदेह का लाभ प्रदान करके दोषमुक्त ठहराते हुए,

अभिनिर्धारित—एक ही विचारण में अन्य सह-अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध एक सह-अभियुक्त की संस्वीकृति मुख्य साक्ष्य नहीं होती है। प्रत्येक मामले में षड्यंत्र के आरोप का प्रत्यक्ष साक्ष्य द्वारा समर्थन करना कठिन होता है किंतु यदि अभियोजन पक्ष पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लेता है, तो स्पष्ट संबंध सिद्ध किया जाना चाहिए और शृंखला पूरी होनी चाहिए, अन्यथा संबंध के एक भाग को पूर्ण मानना जोखिम से खाली नहीं होगा और इस

1987(2) eILR(PAT) SC 1

अपूर्ण साक्ष्य के आधार पर, षड्यंत्र के अभिकथन को माना नहीं जा सकता है। अपराध की प्रकृति को देखते हुए और उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों पर विचार करते हुए, यह न्यायालय उच्च न्यायालय से इस बात पर सहमत नहीं है। (पैरा 9, 15)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1964]	(1964) 6 एस० सी० आर० 623 : **हरिचरण कुर्मी और एक अन्य बनाम बिहार राज्य;**	9
[1952]	(1952) एस० सी० आर० 526 : **कश्मीरा सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य.**	9

दांडिक अपीली अधिकारिता : 1986 की दांडिक अपील संख्या 423-425.

1984 के मृत्यु निर्देश संख्या 3 और 1984 की दांडिक अपील संख्या 676, 647 और 627 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 4 अप्रैल, 1986 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील।

अपीलार्थियों की ओर से — सर्वश्री आर० एल० कोहली और एस० पी० सिंह

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री जय नारायण और डी० गोवर्धन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र ने दिया।

न्यायमूर्ति मिश्र—ये अपीलें 1984 के मृत्यु निर्देश संख्या 3 और 1984 की दांडिक अपील संख्या 627, 647 और 676 में पटना उच्च न्यायालय के एक ही निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई हैं। इन दोनों अपीलों के प्रत्यर्थियों में से प्रत्येक को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सपठित धारा 120-ख के अधीन मृत्यु दंडादेश दिया गया है।

2. अपीलार्थी यादव को संहिता की धारा 302 के अधीन अलग से सिद्धदोष ठहराया गया है और उसे मृत्यु दंडादेश दिया गया है। उसे विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की की धारा 3 के अधीन भी सिद्धदोष ठहराया गया है और दस वर्ष के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया गया है। दो अन्य अभियुक्त व्यक्तियों को, जिनका विचारण अपीलार्थियों के साथ किया गया था, विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया और उनकी दोष-मुक्ति अंतिम बन चुकी है।

3. महेश नारायण प्रसाद शर्मा, जिसके साथ घटना घटी, भारतीय प्रशासनिक सेवा का सदस्य था और बिहार राज्य के गोपालगंज जिले में कलक्टर और जिला मजिस्ट्रेट के रूप में नियुक्त था। तारीख 11 अप्रल, 1983 को महेश नारायण प्रातः अपने न्यायालय काम करने के लिए गए और अपना कार्य समाप्त करने के पश्चात्, वह और उसका भाई, अभियोजन साक्षी 62, जो मृतक के कक्ष में प्रतीक्षा कर रहा था, कलक्टर भवन की प्रथम मंजिल से उतर कर नीचे ड्योढ़ी पर जाने लगे जहां कलक्टर की कार खड़ी हुई थी। महेश

प्रसाद के पीछे उसका अर्दली-चपरासी, अभियोजन साक्षी 19 और उसका भाई आगे-पीछे चल रहे थे। जब कलक्टर नीचे उतरे तो यादव ने, जो उनका पीछे कर रहा था, अपने उस थैले से, जो उसके हाथ में था सहसा ही एक बम निकाला और कलक्टर की ओर फेंका। बम बड़े शोर के साथ फटा और इसके फटने के परिणामस्वरूप महेश कुमार लुढ़क कर गिर गया और उसके शरीर के चिथड़े-चिथड़े उड़ गए यादव साथ की रेलिंग से होकर सीढ़ियों से कूद गया। अभियोजन साक्षी 62 और अन्य लोगों ने उसका पीछा किया और उसे फल की दुकान के पास पकड़ लिया गया। उसने अपने दोष की तुरंत संस्वीकृति कर ली और यह बताया कि उसने यह नृशंस हत्या अपीलार्थी त्रिपाठी के कहने पर की थी। यादव के अनुसार, त्रिपाठी ने उसे इस बात के प्रतिशोध के लिए जिलाधिकारी की हत्या करने को राजी किया था कि उसने (जिलाधिकारी ने) त्रिपाठी को कारावास में निरुद्ध करके आश्रम तोड़ दिया था। यादव ने आगे यह भी बताया कि सादिक ने, जो अभियुक्त व्यक्तियों में से एक था, उसे बम दिया था। अभियोजन साक्षी 14, पुलिस निरीक्षक ने, जो बम फटने की आवाज सुनकर घटना-स्थल पर पहुंचा था, अभियोजन साक्षी 62, द्वारा दिए गए बयान के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की और यादव को गिरफ्तार करके उसे गोपाल गंज थाने में भेज दिया।

4. विचारण के समय, अभियोजन पक्ष की ओर से 75 साक्षियों की परीक्षा की गई। उनमें से 14 ने साक्ष्य दिया है। जहां तक यादव का संबंध है, उसके हत्या में शामिल होने की बाबत प्रत्यक्ष साक्ष्य है और इस बाबत उसने अपने दोष की संस्वीकृति भी कर ली थी। जहां तक उसका संबंध है, विशेष इजाज़त दंडादेश के प्रश्न तक ही परिसीमित है। अतः, हमने दंडादेश के प्रश्न पर यादव के विद्वान् काउंसेल को सुना और हम उस बात से भिन्न मत अपनाने के लिए, जो उसके बारे में उच्च न्यायालय द्वारा कही गई है, किसी प्रकार का न्यायौचित्य नहीं पाते हैं। अतः, उसकी अपील खारिज की जाती है और विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट की गई उसकी दोषसिद्धि और दंडादेश कायम रहेंगे।

5. अब हम सदानंद त्रिपाठी द्वारा फाइल की गई अपील पर विचार करेंगे। सदानंद गरीब परिवार का व्यक्ति था और उसने अपना जीवन बस कंडक्टर के रूप में शुरू किया था। नौकरी करते हुए, उसने एल० एल० बी० की डिग्री प्राप्त की और कुछ समय तक उत्तर प्रदेश में वकालत की। तत्पश्चात्, उसने धार्मिक प्रवचन देने शुरू कर दिए और अपना उपनाम संत ज्ञानेश्वर महाराज रख लिया। उसने अपने अनुयायियों में यह विश्वास उत्पन्न किया कि उसका भगवान से साक्षात्कार हुआ है और यदि वे उसका और उसके उपदेशों का अनुसरण करेंगे, तो उनका भी भगवान से साक्षात्कार हो जाएगा। शीघ्र ही उसके अनुयायियों की संख्या बढ़ गई। वह अपने अनुयायियों को यह बताया करता था कि उन्हें अपने शरीर, धन और बुद्धि का समर्पण कर देना चाहिए ताकि उन्हें शीघ्रातिशीघ्र भगवान के साथ साक्षात्कार होने का अवसर संभव हो सके। उसने एक सरकारी भूखंड पर अधिक्रमण करके उस पर अपना आश्रम बना लिया। चूंकि उसके पास संसाधनों की कोई कमी नहीं थी, आश्रम समस्त आधुनिक सुख-सुविधाओं से संपन्न हो गया। तथापि, शीघ्र ही उसके अनुयायी यह महसूस करने लगे कि उनके साथ धोखा और चालबाजी की गई है और इसलिए वे उससे दूर भागने लगे। सदानंद ने अपनी घृणित चालों को साकार करने के लिए

कुछ गुंडे पाल रखे थे। उसके अनुयायियों को प्राय: अपनी सुरक्षा की आशंका होने लगी और इसलिए वे अपनी संरक्षा के लिए स्थानीय प्राधिकारियों के समक्ष पहुंचे। आश्रम, जसाकि अभियोजन ने बताने की चेष्टा की, अपराधियों का अड्डा बन गया। अंततोगत्वा, प्राधिकारियों ने आश्रम पर छापा मारा और वहां से बम और अनेको अन्य वस्तुएं बरामद कीं। सदानंद और बहुत-से अन्य लोगों को तारीख 10 जुलाई, 1982 को हिरासत में ले लिया गया। मृतक महेश प्रसाद, ने जो गोपाल गंज का कलक्टर था, सदानंद को कारावास में निरुद्ध करने के लिए दंड नियंत्रण अधिनियम के अधीन आदेश किया था। अधिक्रमण की गई भूमि से बेदखली संबंधी कार्यवाहियां पहले ही की जा चुकी थीं। तारीख 14 जुलाई, 1982 को आयुक्त ने आश्रम की ओर से फाइल की गई अपील खारिज कर दी और तारीख 15 जुलाई, 1982 को आश्रम की पूरी इमारत स्वयं कलक्टर के पर्यवेक्षण में गिरा दी गई।

6. इस बारे में कोई विवाद नहीं है कि सदानंद को तारीख 10 जुलाई, 1982 से 11 अप्रैल, 1983 तक, जब कलक्टर की हत्या की गई, निरंतर जेल में निरुद्ध किया हुआ था। इस तथ्य को देखते हुए, अभियोजन पक्ष ने कलक्टर की हत्या में सदानंद की सह-अपराधिता को सिद्ध करने के लिए षड्यंत्र, संस्वीकृति के अभिकथन और अन्य बातों का अवलंब लिया है।

7. दो संस्वीकृतियां की गई हैं—मजिस्ट्रेट के समक्ष की गई न्यायिक संस्वीकृति, जो कि प्रदर्श 44 है और दूसरी न्यायिकेतर संस्वीकृति है। प्रदर्श 44 पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया—

> "जहां तक मजिस्ट्रेट के समक्ष की गई संस्वीकृति, प्रदर्श 44, का संबंध है, विचारण न्यायालय ने स्वयं संकोच के साथ, इसे स्वीकार किया है। संस्वीकृति से मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि यह प्रतिपरीक्षा की प्रकृति की थी जो विधि के अधीन अनुज्ञेय नहीं है और उच्चतम न्यायालय तथा देश के विभिन्न न्यायालयों द्वारा इसकी भर्त्सना की गई है। श्री पांडेय ने, जो राज्य की ओर से हाजिर हुए थे, यह ठीक ही दलील दी कि प्रदर्श 44 का इस मामले में प्रयोग नहीं किया जा सकता। अत:, इस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए।"

हमारे समक्ष राज्य की ओर से जया नारायण ने प्रारंभ में संस्वीकृति का अवलंब लिया किंतु बाद में यह बात मान ली कि संस्वीकृति की बाबत उच्च न्यायालय ने जो मत व्यक्त किया है, उससे यह निरपराध घोषित करने वाली प्रकृति की प्रतीत होती थी और, इसलिए यह सह-अभियुक्त के विरुद्ध अनुज्ञेय नहीं होगी। इन परिस्थितियों में, न्यायिक संस्वीकृति पर विचार नहीं किया जाना चाहिए।

8. न्यायिकेत्तर संस्वीकृति पर विचार करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसका संबंध घटना के समय के साथ है। इस बात का साक्ष्य है कि बम फटने के तत्पश्चात् यादव को भीड़ ने पकड़ लिया था और उसकी जमकर पिटाई की थी। अनेक अभियोजन साक्षियों ने यह बताया है कि यादव ने उसके समक्ष संस्वीकृति की थी। इस बात की बाबत स्पष्ट सामग्री है कि यादव को पीटा गया था। अभियोजन साक्षी 3 का कहना है कि—

> "मैंने और अन्य व्यक्तियों ने उसका पीछा करके उसे पकड़ा था। हममे उसे

1987(2) eILR(PAT) SC 1

पीटना शुरू कर दिया और उससे पूछने लगे। तब उक्त व्यक्ति ने स्वयं कहा कि, "आप लोग मुझे क्यों पीट रहे हैं। मैंने गुरु संत ज्ञानेश्वर के आदेश पर कलक्टर की हत्या की है तथा एक और बम झोले में पड़ा हुआ है।"

अभियोजन साक्षी 10 ने कहा—

"जिन लोगों ने उसे पकड़ा था उन्होंने उसे पीटना शुरू कर दिया और वे उससे यह पूछने लगे कि उसने कलक्टर की क्यों हत्या की। उससे यह पूछे जाने पर, उसने बताया कि उसने बाबा के आदेश से कलक्टर की हत्या की है·····।"

अभियोजन साक्षी 11 ने बताया—

"उसे पकड़े जाने पर, उस पर थप्पड़ और घूंसे बरसाए गए और यह पूछा गया कि उसने ऐसा क्यों किया। पूछे जाने पर उक्त व्यक्ति का उत्तर था, उसने गुरू के आदेश से कलक्टर पर बम फेंका था।"

अनेक अन्य लोगों ने भी यही बात बताई कि यादव को पकड़कर क्रुद्ध भीड़ ने उसे पीटा था। यह भी तथ्य है कि कुछ साक्षियों ने जो, अभियोजन के अनुसार, उस समय उपस्थित थे जब यादव को घटना के पश्चात् हिरासत में लिया गया था, किसी संस्वीकृति के बारे में नहीं बताया है। इन साक्षियों में अभियोजन साक्षी 5, 12, 15, 40 और 57 है। तारीख 13 अप्रैल, 1983 को संहिता की धारा 164 के अधीन अभिलिखित स्वयं अपने कथन में, यादव ने अपने पकड़े जाने के पश्चात् किसी प्रकार का कथन करने की बात से इंकार किया है। अभियोजन पक्ष की इस कहानी को कि यादव ने ऐसा कथन किया था यदि मान भी लें तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह कथन उसने अपने पीटे जाने के परिणामस्वरूप किया था। यदि यह मान भी लिया जाए कि यादव ने यथा अभिकथित कथन किया है, तो क्या इसका सदानंद के विरुद्ध प्रयोग किया जा सकता है, यह अगला विचारणीय पहलू है। स्पष्टतया, जब यादव को पीटा गया, तो वह पिटाई से बचने के लिए चिंतित होगा। ऐसी स्थिति में उसका अभिवाक् न तो ऐच्छिक ही होगा और न ही स्वाभाविक। इसका किसी भी प्रयोजनार्थ अवलंब लेना उचित नहीं होगा।

9. यह सुस्थिर है कि एक ही विचारण में अन्य सह-अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध एक सह-अभियुक्त की संस्वीकृति मुख्य साक्ष्य नहीं होती है। जैसा कि इस न्यायालय ने **कश्मीरा सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह बात स्पष्ट की कि विचारण के समय एक सह-अभियुक्त की संस्वीकृति अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध मुख्य साक्ष्य नहीं होती है किंतु इसका प्रयोग केवल उस बात को पुनः सुनिश्चित करने के लिए किया जा सकता है, यदि कोई अन्य मुख्य साक्ष्य है, जिसका प्रयोग किया जा सकता है अथवा जिस पर कार्रवाई की जा सकती है। **हरिचरण कुर्मी और एक अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था—

"अतः, संस्वीकृति को धारा 30 के उपबंधों के कारण सामान्य भाव में साक्ष्य

[1] [1952] एस० सी० आर० 526.
[2] [1964] 6 एस० सी० आर० 623.

1987(2) eILR(PAT) SC 1

माना जा सकता है, किंतु तथ्य यह है कि यह अधिनियम की धारा 3 द्वारा यथा-परिभाषित साक्ष्य नहीं है। अतः, इसके परिणामस्वरूप किसी अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध मामले पर विचार करते हुए, न्यायालय किसी सह-अभियुक्त व्यक्ति की संस्वीकृति से मामला प्रारंभ नहीं कर सकता है; उसे अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए अन्य साक्ष्य से मामला प्रारंभ करना चाहिए और उक्त साक्ष्य की गुणवत्ता और प्रभाव की बाबत अपनी राय बना लेने के पश्चात्, दोषिता के निष्कर्ष की बाबत, जो निष्कर्ष न्यायालय उक्त अन्य साक्ष्य के आधार पर निकालने वाला ही है, आश्वस्त होने के लिए संस्वीकृति पर विचार करना अनुज्ञेय है।"

"·····यह कि सह-अभियुक्त व्यक्ति की संस्वीकृति को मुख्य साक्ष्य नहीं माना जा सकता है और इसका सहारा केवल तभी लिया जा सकता है जब न्यायालय अन्य साक्ष्य स्वीकार करने को तैयार हो और उक्त साक्ष्य से निकाले गए अपने निष्कर्ष के समर्थन में ही आश्वासन के लिए ऐसी आवश्यकता महसूस करे।"

10. अब यह पता लगाना है कि क्या संस्वीकृति के अलावा भी कोई मुख्य साक्ष्य है जिसका अभियोजन पक्ष अपने पक्षकथन के समर्थन में सहारा ले सकता है। अभियोजन पक्ष के अनुसार, यादव सदानंद के साथ आश्रम में रह रहा था। सदानंद के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि इस आधार पर अभियोजन साक्ष्य नामंजूर किया जाना चाहिए चूंकि जबकि तारीख 10 जुलाई, 1982 को सदानंद को आश्रम पर छापा पड़ने के पश्चात् हिरासत में लिया गया, यादव वहां नहीं था। पुनः, तारीख 15 जुलाई, 1982 को जब आश्रम गिराया गया और आश्रम में रहने वाले अधिकांश लोगों को हिरासत में लिया गया, तो यादव को गिरफ्तार नहीं किया गया था।

11. अनेक अन्य साक्षियों की यह दर्शित करने के लिए परीक्षा की गई कि यादव के सदानंद के साथ बहुत घनिष्ठ संबंध थे। किंतु जैसा कि ठीक ही बताया गया है, उनकी इस जानकारी का स्रोत यादव का कथन प्रतीत होता है और स्वतंत्र रूप में उन्हें इस तथ्य की बाबत किसी प्रकार की निजी जानकारी नहीं थी।

12. अभियोजन पक्ष ने हेतु का अवलंब लेने की ईप्सा की। निस्संदेह, सदानंद कलक्टर द्वारा उसे निरुद्ध किए जाने और उसका आश्रम गिराए जाने के कारण भी कलक्टर के प्रति वैमनस्य अवश्य रखता होगा। वास्तव में, यादव और सादिक को सम्मिलित करते हुए आश्रम के सभी निवासियों की सामान्य प्रतिक्रिया यही रही होगी। अतः, यह कोई ऐसी बात नहीं हो सकती जिससे षड्यंत्र सिद्ध होने के सूत्र का पता चल सके।

13. अभियोजन पक्ष ने भी इस बात का अवलंब लिया है, जो यदि मान ली जाए, तो अपराध के किए जाने के लिए दोनों के मध्य किसी प्रकार का सूत्र हो सकती है। अभियोजन पक्ष के अनुसार, यादव नियमित रूप में सदानंद से जेल में मिलता रहता था। किंतु जेल के अभिलेखों से इन भेटों को समर्थन प्राप्त नहीं होता है। अभियोजन के पक्ष-कथन के अनुसार, यादव सदानंद से मुलाकात करने के लिए जेल के अधिकारियों को रिश्वत दे रहा था। अभियोजन पक्ष ने यह दर्शित करने के लिए आगे यह भी साक्ष्य पेश किया है कि सदानंद के जेल में पहुंचने पर, नियमों के लागू किए जाने में ढील बरती जाने लगी और

वहां नियमित रूप से बाहर से भोजन आता था। जेल के पदाधिकारियों को भी सदानंद द्वारा रिझाया जाता था। इस प्रकार के साक्ष्य को, यदि स्वीकार कर भी लिया जाए, तो भी षड्यंत्र सिद्ध नहीं होता है क्योंकि यादव के अनुयायी होने के कारण, उसका सदानंद से सामान्यतया प्रतिदिन मुलाकात करना अधिसंभाव्य था और इस तथ्य से कि वे नियमित अंतरालों पर मिलते रहते थे, षड्यंत्र सिद्ध नहीं हो जाता है। अभियोजन पक्ष ने अभियोजन साक्षी 4 की परीक्षा करके तारीख 11 अप्रैल, 1983 की एक घटना का अवलंब लिया। इस साक्षी ने जो उसी जेल में सिद्धदोष के रूप में कारावास भोग रहा था, यह कहा कि उसकी पत्नी तारीख 11 अप्रैल, 1983 को 2 या 3 रुपए की रिश्वत देकर उससे जेल में मिली थी। जब वह अपनी पत्नी से बातचीत कर रहा था, उसने अभियुक्त यादव को सदानंद से बात करते हुए देखा। उसने यह भी सुना कि यादव त्रिपाठी से यह कह रहा था कि उसका काम लगभग एक घंटे में कर दिया जाएगा। सदानंद ऐसा कहने पर खुश दिखाई दिया था। अभियोजन साक्षी 4 ने यह स्वीकार किया है कि वह हत्या के तीन और डकैती के अनेकों मामलों में दोषसिद्ध किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय तक उसके विरुद्ध कुछ मामले भी लंबित थे जिनमें बाद में पुलिस द्वारा अंतिम रिपोर्ट दी गई थी। उसकी पत्नी की, जो महत्वपूर्ण साक्षी थी, इस मामले में परीक्षा नहीं की गई थी।

14. स्पष्टतया, चूंकि जेल के अभिलेखों से यह दर्शित नहीं होता कि अभियोजन साक्षी 4 की उस दिन अपनी पत्नी से मुलाकात हुई थी, अतः जेल पदाधिकारियों को रिश्वत देने की कहानी गढ़ी गई है। हम अपीलार्थी के काउंसेल की इस आलोचना को मानने को तैयार हैं कि यदि पत्नी को बुलाया जाता तो वह इस बयान का समर्थन नहीं करती कि वह उस दिन अपने पति अभियोजन साक्षी 4 से मिली थी। पत्नी की परीक्षा न करने के लिए अभियोजन के विरुद्ध प्रतिकूल अनुमान लगाया जाना चाहिए। अतः, यही वास्तविक स्थिति होगी।

15. जैसी कि राज्य की ओर से श्री जय नारायण ने दलील दी है, यह सत्य है कि प्रत्येक मामले में षड्यंत्र के आरोप का प्रत्यक्ष साक्ष्य द्वारा समर्थन करना कठिन होता है किंतु यदि अभियोजन पक्ष पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लेता है, तो स्पष्ट संबंध सिद्ध किया जाना चाहिए और श्रृंखला पूरी होनी चाहिए, अन्यथा संबंध के एक भाग को पूर्ण मानना जोखिम से खाली नहीं होगा और इस अपूर्ण साक्ष्य के आधार पर, षड्यंत्र के अभिकथन को माना नहीं जा सकता है। अपराध की प्रकृति को देखते हुए और उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों पर विचार करते हुए, हम उच्च न्यायालय से इस बात पर सहमत नहीं हो पाए हैं कि अभियोजन पक्ष ने पारिस्थितिक साक्ष्य द्वारा यादव के माध्यम से कलक्टर की हत्या करने के षड्यंत्र में सदानंद की सह-अपराधिता सिद्ध कर दी है। इन परिस्थितियों में, सदानंद हमारे संदेह के लाभ का हकदार हो गया है और उसकी दोषसिद्धि कायम नहीं रखी जा सकती है। उसकी अपील मंजूर करनी होगी। उसे दोषमुक्त किया जाता है और उसे तत्काल मुक्त करने का निदेश दिया जाता है।

16. इस मामले को समाप्त करने से पूर्व, हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि जिलाधिकारी की उसके कार्यालय में हत्या के इस मामले में, बेहतर अन्वेषण अपेक्षित था और राज्य को यह सुनिश्चित करने के लिए और अधिक सतर्क होना चाहिए था कि

अन्वेषण में होने वाली प्रत्येक कमी की विधि के सही समय पर पूरा किया जाना चाहिए था। मह दुर्भाग्य की बात है कि अन्वेषण में कमियां रहीं।

अपील मंजूर की गई।

मदन/मा०